शिक्षा के निजीकरण के मायने

सुनील

सुनील सामाजिक बराबरी और न्याय के पक्षधर थे। वे सभी बच्चों की अच्छी एवं समान शिक्षा के हक में लड़ते रहे। वे शिक्षा के निजीकरण के घोर विरोधी थे क्योंकि उनका मानना था कि ऐसी शिक्षा समाज में विषमता उत्पन्न करती है। शिक्षा के अधिकार कानून का उन्होंने भरसक विरोध किया। उनका कहना था कि यह कानून समाज में बहु-परती शिक्षा को वैधानिकता प्रदान करता है। यह वक्तव्य 7 अप्रैल, 2014 को शिक्षा अधिकार मंच, भोपाल द्वारा आयोजित शिक्षा नीति पर राजनैतिक दलों से सवाल-जवाब के वक्त दिया गया था।

समाजवादी जन परिषद् का शुरू से बहुत स्पष्ट रूप से मानना है कि शिक्षा का बाजार नहीं होना चाहिए और आजाद भारत के हर बच्चे को बिना भेदभाव के अच्छी शिक्षा उपलब्ध करवाना हमारी सरकारों की जिम्मेदारी है जिसका वे निर्वाह नहीं कर रही हैं। यह हमारे आजादी के आन्दोलन का एक सपना था कि जब देश आजाद हो जाएगा तो इस देश का कोई भी बच्चा अशिक्षित नहीं रहेगा और सरकार उनकी शिक्षा की व्यवस्था करेगी और इस बात को देखेगी कि देश का कोई भी बच्चा बिना पढ़ा-लिखा नहीं रहे। हर बच्चे को मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा मिले, इसे हमारे संविधान के नीति-निर्देशक तत्वों में शामिल किया गया। लेकिन जैसे और कई मामलों में आजाद हिन्दुस्तान के साथ हमारे शासकों ने धोखा किया है, विश्वासघात किया है वैसे ही शिक्षा के क्षेत्र में भी किया है।

मैं आपका ध्यान इस बात की ओर आकर्षित करना चाहता हूं कि आजाद हिन्दुस्तान में सबसे पहले और सबसे प्रबल रूप से समाजवादी आन्दोलन ने इस मुद्दे को उठाया कि दो तरह की शिक्षा नहीं होनी चाहिए। कोई पैसे वाला है तो उसका बच्चा कॉन्वेंट स्कूल में पढ़ेगा, ज्यादा पैसे वाला है तो दून स्कूल में पढ़ेगा और देश के साधारण बच्चे सरकारी स्कूल में पढ़ेंगे। यह दोहरी शिक्षा आजाद भारत नहीं चलनी चाहिए। इसे लेकर समाजवादी आन्दोलन ने एक नारा भी दिया गया था 'राष्ट्रपति की हो या चपरासी की संतान, सबकी शिक्षा एक समान'। यह भेदभाव ब्रिटिश भारत में चल गया अब नहीं चलना चाहिए।

देखिए, यह सिर्फ सिद्धांत की बात नहीं है, यह तो हमारे अनुभवों और व्यवहार से भी दिखाई दे रही है। आज क्या स्थिति है? शिक्षा में हमने बहुत प्रगति की है। पहले बहुत कम स्कूल थे, अब हर गांव में और हर मौहल्ले में स्कूल है। बहुत दूरस्थ इलाकों में भी स्कूल खुल चुके हैं लेकिन उन स्कूलों में जो शिक्षा मिल रही है वह नाम मात्र की शिक्षा मिल रही है। पांचवीं पास हो जाएंगे, छठी, आठवीं में बच्चा पहुंच जाएगा लेकिन उनकी लिखने, पढ़ने और हिसाब करने की योग्यता बहुत कमजोर है। यह क्यों हो रहा है? इसलिए हो रहा है कि इस देश में जितने पैसे वाले लोग हैं उन्होंने अपनी व्यवस्था अलग बना ली है और उनको अब इस बात की परवाह नहीं है कि सरकारी स्कूलों में पढ़ाई हो रही है या नहीं हो रही है। कितने शिक्षक हैं, क्या व्यवस्था है, शिक्षक आता है या नहीं, यह सारी चीजें हैं जिनसे उनको कोई मतलब नहीं है। तहसीलदार का बच्चा, एसडीएम का बच्चा, कलेक्टर का बच्चा, विधायक का बच्चा, सांसद का बच्चा, सेठ का बच्चा इन सबके बच्चे सरकारी स्कूल से बाहर निजी स्कूलों में पढ़ रहे हैं। तो यह जो बंटवारा हुआ है इसने भारत की शिक्षा व्यवस्था को चौपट करके रख दिया है, यह हमारे चारों तरफ के अनुभवों से दिखाई देता है। जब यह बंटवारा नहीं था, पहले निजी स्कूल बहुत कम

थे, तो सारे बच्चे सरकारी स्कूल में जाते थे और सरकारी स्कूलों में पढ़ाई भी होती थी।

यह बिलकुल साफ बात है जिसे हमें स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि जितना बंटवारा बढ़ता जाएगा और निजीकरण होता जाएगा शिक्षा का बाजार बढ़ता जाएगा। यह बाजार एक विकृति है। किसी भी आधुनिक समाज में शिक्षा के बाजार का मतलब क्या है? पहले हम कहते थे कि हमारी शिक्षण संस्थाएं शिक्षा के मंदिर हैं लेकिन अब वे दुकानें बन गई हैं। इनमें मुनाफाखोरी चल रही है। यदि शिक्षा को बाजार के हवाले कर दिया जाएगा तो क्या होगा? इसमें यही चीजें होंगी। यह जो घोटाले हो रहे हैं, मेडिकल सीट के लिए दस लाख, बीस लाख रुपये लिए जा रहे हैं, यह सब इसका ही परिणाम है।

होशंगाबाद जिले में चारों तरफ पांच-छह बीएड कॉलेज खुल गए हैं और इन बीएड कॉलेजों में क्या होता है? इन बीएड कॉलेजों में आप पैसा दे दीजिए, चालीस हजार फीस है, आप एक लाख रुपए दे दीजिए आपको वहां उपस्थित होने की जरूरत नहीं है और आप पास भी हो जाएंगे। यह शिक्षा के बाजार का परिणाम है। बहुत साफ बात है, बाजार में उसी के लिए कुछ जगह है जिसके पास पैसा है। यदि आपके पास पैसा नहीं है तो बाजार में आपके लिए कोई जगह नहीं है। आपको टुकड़े फेंकेंगे, झूठन फेंकेंगे आप वह उठा सकते हैं, नहीं तो बाजार में आपके लिए कोई जगह नहीं है। इसलिए शिक्षा का बाजार किसी हालात में नहीं होना चाहिए।

यदि हम यह चाहते हैं कि इस देश के सारे बच्चे अच्छी तरह भली-भांति शिक्षित हों तो शिक्षा के बाजार को बिलकुल इजाजत नहीं देनी चाहिए और सरकार को जिम्मेदारी लेनी चाहिए कि यह देखे कि इस देश के सारे बच्चों को शिक्षा मिले। अच्छी शिक्षा मिले, सुविधा संपन्न शिक्षा मिले और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा मिले; यह देखने का काम हमारा है। यह बाजारीकरण क्यों बढ़ रहा है? अभी किसी ने कहा हम क्यों निजीकरण की ओर गए? यह हमें समझना पड़ेगा। निजीकरण की ओर जनता नहीं गई है, जनता की तरफ से कोई मांग नहीं थी निजीकरण की। निजीकरण का जो पूरा सिलसिला है यह विश्व बैंक के द्वारा भारत की शिक्षा नीति को प्रभावित करके, भारत की शिक्षा व्यवस्था को प्रभावित करके यहां पर किया गया। एक कारण और है वह यह कि इस निजीकरण में स्वार्थ है। जितने नेता हैं वे सब शिक्षा के धंधे में कूद पड़े हैं। उनके स्कूल हैं, कॉलेज हैं, इंजीनियरिंग कॉलेज हैं, बीएड कॉलेज हैं। सभी नेताओं ने यह खोल लिए हैं और इनका एक निहित स्वार्थ आज शिक्षा के निजीकरण में बन गया है। इसलिए यह शिक्षा के निजीकरण को अंधाधुंध तरीके से बढ़ा रहे हैं।

मैं यह कहना चाहता हूं कि इस देश में शिक्षा का धंधा, शिक्षा का व्यवसाय सबसे ज्यादा मुनाफे वाला, सबसे ज्यादा अनियंत्रित और सबसे तेजी से बढ़ता हुआ धंधा है। बड़े-बड़े पूंजीपतियों से लेकर छुटभइया नेता तक इसमें कूद पड़े हैं और इसमें अनाप-सनाप लूट है, अनाप-सनाप शोषण है और देश का नुकसान है। समाजवादी जन परिषद् का यह बहुत स्पष्ट मानना है कि निजीकरण का मतलब भेदभाव है। जिसके पास पैसा है उसका बच्चा ऊंचे स्कूल में जाएगा और नहीं है तो वह सरकारी स्कूल में जाएगा। ज्यादा पैसा है विदेश में चला जाएगा। और जिसके पास पैसा नहीं है उसका बच्चा सरकारी स्कूल में जाएगा। मजदूर का बच्चा, गरीब का बच्चा सबसे ज्यादा उपेक्षित रहेगा। शिक्षा में भेदभाव, स्वास्थ्य में भेदभाव। लोग कहते हैं कि बच्चे तो भगवान की देन हैं उन बच्चों में आप भेदभाव कर रहे हैं फिर आप क्या समान अवसर की बात करते हैं। जहां आप शिक्षा में ही भेदभाव की शुरुआत कर देते हैं वहां समान अवसर की बात एक ढकोसला हो जाती है। तो शिक्षा का बाजारीकरण और निजीकरण नहीं होना चाहिए। इस बात से समाजवादी जन परिषद् पूरी तरह से सहमत है। ◆